संघ लोक सेवा आयोग (UPSC)

दर्शनशास्त्र (वैकल्पिक विषय)

भारतीय दर्शन

641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष : 011-47532596, 8750187501
टोल फ्री : 1800-121-6260
Web : www.drishtiias.com
E-mail : online@groupdrishti.com

पाठ्यक्रम, नोट्स तथा बैच संबंधी updates निरंतर पाने के लिए निम्नलिखित पेज को "like" करें
www.facebook.com/drishtithevisionfoundation
www.twitter.com/drishtiias

विषय सूची (Contents)

1.	भारतीय दर्शन का परिचय	5-12
2.	चार्वाक दर्शन	13-20
3.	जैन दर्शन	21-34
4.	बौद्ध दर्शन	35-59
5.	न्याय दर्शन	60-82
6.	वैशेषिक दर्शन	83-94
7.	सांख्य दर्शन	95-108
8.	योग दर्शन	109-113
9.	मीमांसा दर्शन	114-119
10.	वेदांत संप्रदाय-शंकराचार्य	120-140
11.	वेदांत संप्रदाय	141-161
12.	भारतीय दर्शन में प्रामाण्यवाद एवं ख्यातिवाद	162-168
13.	महर्षि अरविंद	169-174

Copyright– Drishti The Vision Foundation

भारतीय दर्शन का परिचय *(Introduction of Indian Philosophy)*

दर्शन का स्वरूप *(Nature of Philosophy)*

दर्शन शब्द की निष्पत्ति 'दृश' धातु से हुई है जिसका तात्पर्य है- 'देखना', अर्थात् दर्शन साक्षात् ज्ञान की प्राप्ति का एक माध्यम है। संक्षेप में कहें तो 'दर्शन' निष्पक्ष, बौद्धिक एवं सर्वांगीण ज्ञान की प्राप्ति का तार्किक प्रयास है।

भारतीय दर्शन की उत्पत्ति आध्यात्मिक असंतोष से हुई है। यहाँ के दार्शनिकों ने संसार को दु:खमय माना है। यहाँ जीवन के प्रति अभावात्मक एवं निषेधात्मक दृष्टिकोण विद्यमान है। जीवन का प्रत्येक क्षण दु:खत्रय (आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक) की स्थिति के कारण व्यथित रहता है। इतना ही नहीं सुख में भी दु:ख का बीज़ विद्यमान होता है। अत: जीवन के इस दु:ख स्वरूप स्थिति के कारणों पर चिंतन प्रारंभ हुआ और दु:ख के कारणों के स्वरूप के आधार पर निवारण की ओर चिंतन धारा निरंतर प्रवाहित होती चली गई। दु:ख निवृत्ति की जिज्ञासा एवं चिंतन-मनन ने भारतीय दर्शन को जन्म दिया। भारतीय मनीषी दु:ख के मूल कारण पर चिंतन कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि अज्ञान या अविद्या ही दु:ख का मूल कारण है। मनुष्य अपने यथार्थ स्वरूप को नहीं जानता है और इसी से वह दु:ख भोगता है। जीवन के यथार्थ स्वरूप, यानी आत्मसाक्षात्कार से समस्त दु:खों से निवृत्ति हो जाती है। यही प्रवृत्ति भारतीय दर्शन को अध्यात्मवादी बनाती है, किंतु भारतीय दर्शन को पूर्णत: आध्यात्मिक मानना उचित नहीं होगा, क्योंकि वैदिककाल से वर्तमान काल तक प्रकृति और जीवन के भौतिक पक्षों पर भी गहन चिंतन किया गया है। अत: भारतीय दर्शन में भौतिकवाद एवं अध्यात्मवाद, दोनों का मिश्रण दिखाई देता है।

भारतीय दर्शन का जीवन से गहरा संबंध है। यह जीवन की समस्याओं एवं दु:ख निवृत्ति के लिये केवल मानसिक जिज्ञासा को शांत करने का प्रयास ही नहीं करता, बल्कि आध्यात्मिक असंतोष तथा जीवन के दु:खों के मूल कारणों को ढूंढ़कर उनसे छुटकारा प्राप्त करने के पूर्ण संभव मार्गों की स्थापना भी करता है। भारतीय दर्शन में चार्वाक का सुखवाद, जैन दर्शन का त्रिरत्न सिद्धांत, बौद्ध दर्शन का आष्टांगिक मार्ग, सांख्य, न्याय, वैशेषिक और वेदांत दर्शन का ज्ञान मार्ग, मीमांसा का कर्मवाद, गीता का निष्काम कर्म आदि केवल दर्शन के सैद्धांतिक पक्ष को ही निरूपित नहीं करते हैं, बल्कि ये सभी सिद्धांत भारतीय दर्शन के व्यावहारिक होने की पुष्टि करते हैं। भारतीय दर्शन में व्यावहारिक पक्ष पर अधिक बल दिया गया है। यहाँ दर्शन का उद्देश्य सिर्फ मानसिक कौतूहल को पूरा करना ही नहीं है, बल्कि जीवन की समस्याओं को सुलझाना भी है। इस प्रकार भारत में दर्शन को जीवन का अभिन्न अंग कहा गया है। जीवन से अलग दर्शन की कल्पना भी संभव नहीं है। प्रो. हरियाना ने कहा है कि "दर्शन सिर्फ सोचने की पद्धति न होकर जीवन पद्धति है।" दर्शन को जीवन का अंग कहने का कारण यह है कि यहाँ दर्शन का विकास जगत् के दु:खों को दूर करने के उद्देश्य से हुआ है। जीवन के दु:खों से क्षुब्ध होकर यहाँ के दार्शनिकों ने दु:खों के समाधान के लिये दर्शन को अपनाया है। अत: भारतीय दर्शन साधन है, जबकि साध्य है- दु:खों से निवृत्त होना।

भारतीय दार्शनिक संप्रदायों में वेदों की प्रामाणिकता के प्रति आस्था और अनास्था के आधार पर दो वर्गों में विभाजित किया गया है। ये दो वर्ग हैं- आस्तिक और नास्तिक। भारतीय दार्शनिक विचारधारा में आस्तिक उसे कहा जाता है, जो वेद की प्रामाणिकता में विश्वास करता है और नास्तिक उसे कहा जाता है, जो वेद को प्रमाण के रूप में स्वीकार नहीं करता है। इस प्रकार आस्तिक का अर्थ है- 'वेद का अनुयायी' और नास्तिक का अर्थ है 'वेद का विरोधी'। इस दृष्टिकोण से आस्तिक वर्ग में न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा और

Copyright– Drishti The Vision Foundation

चार्वाक दर्शन *(Charvaka Philosophy)*

ज्ञान का सिद्धांत *(Theory of Knowledge)*

चार्वाकों द्वारा अनुमान प्रमाण का खंडन

चार्वाक भारतीय दर्शनों में एकमात्र दर्शन है जो अनुमान को प्रमाण नहीं मानता। वह प्रत्यक्ष को ही एकमात्र प्रमाण मानता है।

अनुमान का अर्थ है अनुमान, अर्थात् पश्चात् होने वाला ज्ञान। हेतु के प्रत्यक्ष के आधार पर साध्य का ज्ञान प्राप्त करना ही अनुमान है, जैसे- धुएँ को देखकर आग का अनुमान करना। चार्वाक का दावा है कि अनुमान में निश्चयात्मकता नहीं होती। इसके अतिरिक्त, उसने व्याप्ति का कई आधारों पर खंडन किया है। व्याप्ति को अनुमान का प्राण माना जाता है। व्याप्ति हेतु और साध्य के मध्य नियत, सार्वभौम, शर्तरहित तथा अनिवार्य संबंध का नाम है, जिस पर अनुमान आधारित होता है। चार्वाक का दावा है कि व्याप्ति स्वयं ही सिद्ध नहीं हो सकती, अतः उस पर आधारित अनुमान अप्रामाणिक होने को बाध्य है।

चार्वाक ने अनुमान का खंडन निम्नलिखित तर्कों के माध्यम से किया है–

1. व्याप्ति का ज्ञान प्रत्यक्ष से नहीं हो सकता, क्योंकि प्रत्यक्ष सिर्फ विशेषों का होता है, सामान्य का नहीं। सीमित स्थान व सीमित काल के प्रत्यक्षों के आधार पर यदि हम व्याप्ति बनाना भी चाहें तो इसमें 'अवैध सामान्यीकरण दोष' (Fallacy of Illicit Generalisation) उपस्थित हो जाता है। हमने न तो अतीत और भविष्य के धुएँ देखे हैं, और न ही अन्य स्थानों के, तो हम 'जहाँ-जहाँ धुआँ है, वहाँ-वहाँ आग है' कैसे कह सकते हैं?
2. चार्वाक के अनुसार व्याप्ति का ज्ञान अनुमान से भी संभव नहीं है, क्योंकि इसमें 'चक्रक दोष' (Fallacy of Arguing In A Circle) उपस्थित होता है। अनुमान स्वयं व्याप्ति पर आश्रित है और यदि व्याप्ति को अनुमान पर आश्रित कर दें तो 'चक्रक दोष' या 'अन्योन्याश्रय दोष' (Fallacy of Petitio Principii) आ ही जाएगा। इससे अनवस्था दोष (Fallacy of Infinite Regress) भी पैदा होता है, क्योंकि यदि अनुमान 'क' को व्याप्ति 'ख' से तथा व्याप्ति 'ख' को अनुमान 'ग' से सिद्ध करें तो यह अनवरतशृंखला बन जाती है।
3. व्याप्ति का ज्ञान शब्द प्रमाण से भी नहीं हो सकता, क्योंकि शब्द स्वतंत्र प्रमाण है ही नहीं। फिर, शब्द प्रमाण अनुमान पर ही निर्भर है, क्योंकि व्यक्ति की आप्तता या विश्वसनीयता स्वयं अनुमान की वस्तु है। अतः यहाँ चक्रक दोष की समस्या उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त, शब्द प्रमाण शब्द और अर्थ के नियत तथा सार्वभौम संबंध पर टिका है जो खुद एक व्याप्ति ही है। यह पुनः चक्रक दोष है।
4. व्याप्ति का ज्ञान उपमान (Comparison) से भी नहीं हो सकता, क्योंकि उपमान स्वतंत्र प्रमाण नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष पर ही आधारित है। उपमान दो वस्तुओं की सादृश्यता का ज्ञान है और सादृश्यता का ज्ञान खुद प्रत्यक्ष पर आधारित है।
5. व्याप्ति का ज्ञान 'कारण कार्य नियम' (Law of causation) के आधार पर भी नहीं हो सकता। बौद्धों ने कारणता नियम के आधार पर व्याप्ति को स्थापित करने का प्रयास किया है। इस तर्क के अनुसार

Copyright– Drishti The Vision Foundation

जैन दर्शन *(Jain Philosophy)*

परिचय

'जैन' शब्द की उत्पत्ति 'जिन' शब्द से हुई है जिसका अर्थ होता है 'विजयी अथवा विजेता'। अर्थात जिसने मन की समस्त इच्छाओं और कामनाओं, रागद्वेषादि पर विजय प्राप्त कर लिया हो तथा जिसने संसार के आवागमन से मुक्ति प्राप्त कर लिया हो। ऐसे व्यक्ति को 'अर्हत' तथा 'वीतराग' भी कहा जाता है। इन्हीं जिन के उपदेश को मानने वाले 'जैन' कहलाए तथा इनसे संबंधित सिद्धांत को 'जैन दर्शन' कहा गया। जैन अपने धर्म प्रचारक सिद्धों को तीर्थंकर कहते हैं और इनकी संख्या 24 बताते हैं। इनमें प्रथम, तीर्थंकर ऋषभदेव और अंतिम तीर्थंकर महावीर (वर्धमान) हुए। इनके कुछ तीर्थंकरों के नाम ऋग्वेद में भी मिलते हैं जिससे इनकी प्राचीनता प्रमाणित होती है। भागवत पुराण में ऋषभदेव नामक व्यक्ति का विस्तृत वर्णन है। तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ आठवीं/नवीं शती ई.पू. में हुए जबकि छठी शताब्दी ई.पू. में महावीर (बुद्ध के समकालीन) हुए। जैन दर्शन और धर्म के वर्तमान स्वरूप के प्रमुख प्रवर्तक महावीर को माना जाता है। 'निर्ग्रंथ' उपनाम से विख्यात महावीर का उल्लेख बौद्ध निकाय में 'निगंठ नाथपुत्त' के नाम से हुआ है। जैन दर्शन के प्रमुख ग्रंथ प्राकृत भाषा में लिखे गए जबकि बाद के कुछ विद्वानों ने कुछ ग्रंथ संस्कृत भाषा में भी लिखे। 100 ई. के आस-पास आचार्य उमा स्वामी द्वारा संस्कृत भाषा में 'तत्त्वार्थ सूत्र' लिखा गया जिसमें जैन सिद्धांतों के सभी अंगों का पूर्ण रूप से वर्णन किया गया है। जैन धर्म दो संप्रदायों में विभक्त है- श्वेतांबर और दिगंबर (महावीर दिंगबर से संबद्ध थे)। 'दिगंबर' आचार-पालन में अधिक कठोर हैं जबकि 'श्वेतांबर' कुछ उदार हैं। दिंगबर संप्रदाय के मुनि निर्वस्त्र रहते हैं जबकि श्वेतांबर संप्रदाय के मुनि श्वेत वस्त्र धारण करते हैं। उल्लेखनीय है कि यह नियम केवल मुनियों पर लागू होते हैं, गृहस्थों तथा श्रावकों पर नहीं। दिंगबरों के अनुसार मूल आगम लुप्त हो चुके हैं और कैवल्य प्राप्ति के बाद सिद्ध पुरुष को भोजन की आवश्यकता नहीं रह जाती है। स्त्री-शरीर से मुक्ति की प्राप्ति नहीं हो सकती। श्वेतांबर संप्रदाय उपरोक्त बातें नहीं मानते हैं। संक्षेप में इनके सिद्धांतों को ज्ञानमीमांसा, तत्त्व मीमांसा एवं नीति मीमांसा में वर्गीकृत किया जाता है।

जैन दर्शन की ज्ञान मीमांसा

जैन दर्शन के अनुसार ज्ञान के दो प्रकार होते हैं- अपरोक्ष (अथवा प्रत्यक्ष) ज्ञान और परोक्ष ज्ञान। अपरोक्ष ज्ञान के तीन प्रकार होते हैं- अवधि, मनः पर्याय और केवल तथा परोक्ष ज्ञान के दो प्रकार होते हैं- मति और श्रुति। अन्य दर्शनों में अपरोक्ष ज्ञान को निर्विकल्प और परोक्ष ज्ञान को सविकल्प बताया गया है। वस्तुवादी होने के कारण जैन दर्शन 'ज्ञान' में ज्ञाता तथा ज्ञेय के द्वैत को अनिवार्य मानता है। जैन दर्शन में 'ज्ञाता' सर्वज्ञ होने के बावजूद समस्त पदार्थों को ज्ञेय विषय के रूप में ही देखता है। जिस भी ज्ञान को आत्मा स्वयं जानती है अर्थात् जो ज्ञान आत्म-सापेक्ष है और जिसके लिये आत्मा को मन अथवा इंद्रिय रूपी माध्यम या साधन की आवश्यकता नहीं होती, उस ज्ञान को जैन दर्शन अपरोक्ष/प्रत्यक्ष ज्ञान मानता है। दूसरी ओर जिस ज्ञान हेतु आत्मा को मन या इंद्रिय अथवा दोनों की आवश्यकता होती है अर्थात् जो इंद्रिय-मनः सापेक्ष ज्ञान होता है, वह परोक्ष ज्ञान होता है। पुनः अपरोक्ष ज्ञान के अंतर्गतः इंद्रिय द्वारा अदृष्ट दूर स्थित पदार्थों के ज्ञान को 'अवधिज्ञान' कहा जाता है। दूसरे व्यक्तियों के मन के विचारों एवं भावों के ज्ञान को 'मनःपर्यायज्ञान' कहा जाता है। अवधिज्ञान

Copyright– Drishti The Vision Foundation

बौद्ध दर्शन *(Budhist Philosophy)*

भूमिका

बौद्ध दर्शन का प्रवर्तक महात्मा बुद्ध को माना जाता है। इनका जन्म छठी शताब्दी ई. पू. में हुआ था इनके बचपन का नाम सिद्धार्थ था। एक दिन घूमने के दौरान सिद्धार्थ ने एक रोगी, वृद्ध, मृतक एवं संन्यासी को देखा। इन दृश्यों का इनके हृदय पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा जिसके परिणामस्वरूप उन्हें यह महशूस हुआ कि यह संसार दु:खों से भरा है। इन दु:खों के निदान के लिये उन्होंने तत्वज्ञान या बोधिज्ञान प्राप्त किया। बोबिज्ञान प्राप्त हो जाने के बाद इन्हें महात्मा बुद्ध के नाम से जाना जाने लगा। इनके द्वारा प्रवर्तित दर्शन बौद्ध दर्शन कहलाया। इस दर्शन का प्रमुख उद्देश्य दु:खों से मुक्ति रहा है इन्होंने द:खों से मुक्ति के लिये मध्यम-मार्ग के अंतर्गत विभिन्न सिद्धांतों जैसे- प्रतीत्यसमुत्पाद, क्षणिकवाद, नैरात्म्यवाद, अपोहवाद, चार आर्य सत्य, अष्टांगिक-मार्ग आदि का प्रमुख रूप से अपने दर्शन में विवेचन किया है।

प्रतीत्यसमुत्पाद *(Pratityasamutpada- Theory of Dependent Origination)*

परिचय

प्रतीत्यसमुत्पाद बौद्ध दर्शन का केन्द्रीय सिद्धांत है। प्रतीत्य का अर्थ है-'किसी वस्तु के उपस्थित होने पर', तथा समुत्पाद का अर्थ है- 'किसी अन्य वस्तु की उत्पत्ति'। अत: प्रतीत्यसमुत्पाद का अर्थ हुआ- किसी वस्तु की उपस्थिति से किसी अन्य वस्तु की उत्पत्ति। स्पष्ट है कि यह बौद्धों की कारण-कार्यवादी धारणा है, जिसके अनुसार कारण के उपस्थित होने पर कार्य की उत्पत्ति होती है।

प्रतीत्यसमुत्पाद के संबँध में बौद्ध दर्शन में भिन्न-भिन्न व्याख्याएँ विद्यमान हैं-

1. सापेक्ष रूप में प्रतीत्यसमुत्पाद कारण-कार्यवाद है, जिसका नियम है कि कारण होने पर ही कार्य होता है। बुद्ध ने इसके माध्यम से यादृच्छिकतावाद (Accidentalism) के इस विचार का खंडन किया है कि वस्तुएँ अकारण होती हैं। पुन: यह व्याख्या अलौकिककारणवाद का भी खंडन करती है।
2. पारमार्थिक दृष्टि से प्रतीत्यसमुत्पाद प्रपञ्चों का शमन करने वाला 'निर्वाण तत्व' या 'धर्म' है। बुद्ध ने कहा भी है कि जो प्रतीत्यसमुत्पाद को जानता है, वह धर्म को जानता है।
3. एक अन्य दृष्टिकोण से प्रतीत्यसमुत्पाद मध्यमा प्रतिपदा है जो शाश्वतवाद (Eternalism) और उच्छेदवाद (Nihilism) के मध्यमार्ग को स्वीकार करता है। शाश्वतवाद का दावा है कि कुछ वस्तुएँ नित्य हैं, जबकि उच्छेदवाद का दावा है कि वस्तुओं के नष्ट होने पर कुछ भी शेष नहीं रहता। बुद्ध का मानना है कि वस्तुओं का अस्तित्व तो है, किंतु वे नित्य नहीं हैं, उनका विनाश भी है, किंतु वह पूर्ण विनाश नहीं है।

कारणतामूलक व्याख्या

प्रतीत्यसमुत्पाद की इस व्याख्या का उद्देश्य जगत् में विद्यमान दु:खों के मूल कारण की खोज करना है। यह खोज 'द्वादशांग चक्र' के माध्यम से की गई है, जिसे 'भवचक्र', 'संसार चक्र', 'जन्म-मरण चक्र' तथा 'धर्म-चक्र' भी कहा जाता है। इस चक्र का विश्लेषण अनुलोम या प्रतिलोम, दो पद्धतियों से किया जा सकता है। अनुलोम पद्धति में कारण से कार्य तथा प्रतिलोम पद्धति में कार्य से कारण की ओर बढ़ा जाता है। बुद्ध ने प्रतिलोम पद्धति को चुना, क्योंकि वे दु:ख रूपी कार्य के मूल कारण की खोज कर रहे थे।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

न्याय दर्शन *(Nyaya Philosophy)*

प्रमाण सिद्धांत *(Theory of Pramana)*

प्रत्यक्ष प्रमाण *('Perception' as a proof)*

न्याय दर्शन भारतीय दर्शन में ज्ञानमीमांसा (Epistemology) की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण दर्शन है। इसने अपनी प्रमाणमीमांसा में चार प्रमाणों को स्वीकार किया है, जिनमें प्रथम प्रमाण प्रत्यक्ष है। प्रत्यक्ष के स्वरूप, प्रकार तथा प्रक्रिया आदि के संबँध में इसका विवेचन अत्यंत सूक्ष्म है। इसमें प्रत्यक्ष को न केवल प्रमाण (Proof), बल्कि प्रमा (Authentic Knowledge) का एक रूप भी माना गया है।

प्रत्यक्ष की परिभाषा (Definition of Perception)

प्रत्यक्ष की परिभाषा के संबँध में प्राचीन न्याय और नव्य न्याय में कुछ मतभेद हैं। प्राचीन न्याय के संस्थापक गौतम के अनुसार– ''प्रत्यक्ष इन्द्रिय (Sense Organ) तथा विषय (Object) के सन्निकर्ष (Contact) से उत्पन्न होने वाला वह ज्ञान है, जो अव्यपदेश्य, व्यवसायात्मक तथा अव्यभिचारी होता है।'' वाचस्पति मिश्र ने बताया है कि इस परिभाषा में 'अव्यपदेश्य' का अर्थ निर्विकल्पक (Indeterminate) प्रत्यक्ष, व्यवसायात्मक का अर्थ सविकल्पक (Determinate) प्रत्यक्ष तथा अव्यभिचारी का अर्थ भ्राँतिरहित (Unerring) है। अन्नं भट्ट ने भी प्रत्यक्ष की परिभाषा दी है, जिसके अनुसार इन्द्रिय (Sense Organ) और वस्तु (Object) के सन्निकर्ष (Contact) से प्राप्त होने वाला ज्ञान ही प्रत्यक्ष है।

किंतु, नव्य नैयायिकों ने ये परिभाषाएँ स्वीकार नहीं की हैं, क्योंकि उनके अनुसार इनमें तीन दोष हैं– अव्याप्ति दोष (Fallacy of too Narrow Definition), अतिव्याप्ति दोष (Fallacy of too Wide Definition) तथा चक्रक दोष (Fallacy of Arguing in a circle)। अव्याप्ति दोष (Fallacy of too Narrow Definition) इसलिये है, क्योंकि इनमें योगज प्रत्यक्ष तथा ईश्वरीय प्रत्यक्ष शामिल नहीं हो पाते। अतिव्याप्ति दोष (Fallacy of too Wide Definition) इसलिये है, क्योंकि अनुमान (Inference) में भी इन्द्रियों का हेतु (Middle Term) के साथ सन्निकर्ष होता है। चक्रक या अन्योन्याश्रय दोष (Fallacy of Arguing in a circle) इसलिये है, क्योंकि प्राचीन नैयायिकों ने इन्द्रिय की परिभाषा 'जो प्रत्यक्ष कर सके' के रूप में तथा प्रत्यक्ष की परिभाषा 'जिसका ज्ञान इन्द्रिय से हो' के रूप में की है।

इन दोषों से बचने के लिये नव्य-नैयायिकों ने प्रत्यक्ष की परिभाषा भिन्न रूप में की है। गंगेश उपाध्याय के अनुसार, ''विषय की साक्षात् प्रतीति (Immediate Cognition) ही प्रत्यक्ष का लक्षण है (प्रत्यक्षस्य साक्षात्कारित्वं लक्षणं)।'' उदाहरण के लिये जैसे ही हमारे सामने कोई खतरनाक पशु उपस्थित होता है, हमें बिना किसी माध्यम से उसकी साक्षात् प्रतीति हो जाती है। विश्वनाथ ने भी इसी प्रकार की परिभाषा दी और कहा कि ''प्रत्यक्ष वह ज्ञान है जो किसी अन्य ज्ञान पर निर्भर नहीं होता।''

प्रत्यक्ष के भेद *(Types of Perception)*

न्याय दर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष के मूलरूप से दो भेद हैं– लौकिक (Ordinary) प्रत्यक्ष तथा अलौकिक (Extra-ordinary) प्रत्यक्ष।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

वैशेषिक दर्शन *(Vaishesika Philosophy)*

सृष्टि का परमाणुवाद *(Atomistic Theory of Creation)*

न्याय-वैशेषिक दर्शन असत्कार्यवाद (Asatkaryavada) के आधार पर जगत् के निर्माण की व्याख्या करने के लिये परमाणुवादी सिद्धांत (Atomistic Theory) स्वीकार करता है। यह सिद्धांत उसके बहुत्ववादी वस्तुवाद (Pluralistic Realism) का प्रमुख सिद्धांत है। इसके अनुसार सृष्टि (Creation) की व्याख्या परमाणु-संयोग (Combination of atoms) के माध्यम से तथा विनाश या प्रलय (Destruction) की व्याख्या परमाणु-वियोग (Separation of atoms) के माध्यम से की जाती है। ध्यातव्य है कि यह परमाणुवाद पश्चिम के परमाणुवाद से भिन्न है, क्योंकि यह भौतिकवादी (Materialistic) तथा यांत्रिकतावादी (Mechanistic) न होकर आध्यात्मिक (Spiritualistic) तथा प्रयोजनवादी (Teleological) है। इसका कारण यह है कि इसमें परमाणु-संयोग तथा वियोग के पीछे ईश्वर की भूमिका तो है ही, साथ ही आत्मा जैसे आध्यात्मिक द्रव्य (Spiritual Substance) तथा कर्म-सिद्धांत (Law of Karma) जैसे नैतिक नियम को भी स्वीकार किया गया है।

परमाणुओं की विशेषताएँ (Characteristics of Atoms)

न्याय-वैशेषिक के अनुसार इस जगत् के सरलतम (Simplest) तत्त्व परमाणु हैं। परमाणुओं के स्वरूप विवेचन के संदर्भ में वे निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट करते हैं–

1. परमाणु सूक्ष्मतम (Smallest) तत्त्व हैं, जिनका और अधिक विभाजन (Division) नहीं किया जा सकता। यदि भौतिक वस्तु का विभाजन (Division) करते जाएँ तो अनवस्था दोष (Fallacy of Infinite regress) से बचने के लिये जिस सूक्ष्मतम अवस्था को स्वीकार करना पड़ेगा, वही परमाणु है।
2. परमाणु निरवयव (Partless) हैं, अर्थात् इनका कोई अंग या अवयव (Part) नहीं है।
3. परमाणु नित्य (Eternal) हैं, क्योंकि जो निरवयव (Partless) है, वह नित्य ही हो सकता है।
4. परमाणुओं में परस्पर मात्रात्मक (Quantitative) और गुणात्मक (Qualitative), दोनों प्रकार के अन्तर हैं। ध्यातव्य है कि जहाँ शेष परमाणुवादी दर्शन (जैसे- जैन तथा ग्रीक परमाणुवाद) परमाणुओं में सिर्फ मात्रात्मक भेद (Quantitative Differences) स्वीकार करते हैं, वहाँ न्याय-वैशेषिक गुणात्मक भेद (Qualitative Differences) भी मानता है।
5. अत्यन्त लघु होने के कारण परमाणु प्रत्यक्षगम्य (Perceptible) नहीं हैं। इनका ज्ञान अनुमान (Inference) से होता है।
6. आकार की दृष्टि से परमाणु गोलाकार या परिमण्डलाकार (Spherial or Globular) हैं।
7. परमाणु स्वाभाविक रूप से क्रियाशून्य (Passive) और गतिहीन (Motionless) हैं। बाहर से गति (Motion) प्राप्त होने पर ही ये सक्रिय होते हैं।

परमाणुओं के प्रकार (Types of Atoms)

न्याय दर्शन परमाणुओं में मात्रात्मक व गुणात्मक भेद (Quantitative and Qualitative Differences) मानता है और परमाणुओं के भेद को स्पष्ट करने के लिये वह इनका वर्गीकरण करता है। गुणात्मक (Qualitative) दृष्टि से परमाणु चार प्रकार के हैं– वायु (Air) के, अग्नि (Fire) के, जल (Water) के तथा पृथ्वी (Earth) के। ध्यातव्य है कि न्याय दर्शन आकाश (Ether) को महाभूत तो मानता है, किंतु उसे परमाणवीय (Atomic)

Copyright– Drishti The Vision Foundation

सांख्य दर्शन *(Samkhya Philosophy)*

प्रकृति की धारणा *(Concept of Prakriti)*

सांख्य दर्शन के द्वैतवाद (Dualism) में एक तत्त्व प्रकृति (Prakriti) है जबकि दूसरा तत्त्व पुरुष (Purusa)। प्रकृति के आधार पर सांख्य दार्शनिक परिणामवादी दृष्टिकोण से जगत् के विकास (Evolution) व विनाश (Involution) की व्याख्या करते हैं। सांख्य-दर्शन प्रकृति के संबँध में जिन बातों का विश्लेषण (Analysis) करता है, वे हैं– प्रकृति का ज्ञान (Knowledge) कैसे होता है? प्रकृति का स्वरूप (Nature) क्या है? प्रकृति की कौन-कौन सी अवस्थाएँ (Stages) हैं? तथा प्रकृति के अस्तित्व की सिद्धि के प्रमाण (Proofs for existence) कौन से हैं?

प्रकृति का ज्ञान कैसे होता है? (How is Prakriti known?)

सांख्य के अनुसार प्रकृति का ज्ञान अनुमान (Inference) से होता है, जब हम विश्व के मूल कारण (First Cause) की खोज करते हैं। विश्व में दो प्रकार की वस्तुएँ हैं- (i) स्थूल पदार्थ (Gross Objects), जैसे– मिट्टी, पानी, पवन और (ii) सूक्ष्मातिसूक्ष्म पदार्थ (Subtle Objects), जैसे- इन्द्रियाँ (Sense Organs), मन (Mind), बुद्धि (Intellect), अहंकार (Ego) आदि। विश्व का मूल कारण (First Causse) वही हो सकता है जो इन दोनों प्रकार के पदार्थों का आधार बन सके। यह कारण महाभूत (Gross Elements) नहीं हो सकते क्योंकि महाभूतों से मन (Mind) और बुद्धि (Intellect) जैसे सूक्ष्म पदार्थ (Subtle Objects) उत्पन्न नहीं हो सकते। विश्व का कारण पुरुष (Purusa) भी नहीं हो सकता, क्योंकि पुरुष शुद्ध चैतन्यस्वरूप (Purely Conscious) है, जबकि विश्व में मिट्टी और जल जैसे स्थूल व जड़ (Material) पदार्थ भी हैं। सांख्य के अनुसार प्रकृति ही वह मूल कारण (First Cause) है जो स्थूल (Gross) तथा सूक्ष्म (Subtle), दोनों प्रकार के पदार्थों का आधार बनने में सक्षम है। अतः जगत् के कारण की खोज की प्रक्रिया में अनुमान (Inference) के माध्यम से प्रकृति का ज्ञान होता है।

प्रकृति का स्वरूप (Nature of Prakriti)

सांख्य के अनुसार प्रकृति में अनेक विशेषताएँ हैं। यह नित्य (Eternal) तथा शाश्वत है, क्योंकि यह उत्पत्ति (Creation) और विनाश (Destruction) से परे है। यह स्वतंत्र (Independent) है, अर्थात् किसी भी तरह आत्मा (Soul) या पुरुष पर निर्भर नहीं है। यह अचेतन (Unconscious) है और इसी कारण विषय (Object) अथवा ज्ञेय (Knowable) है, विषयी (Subject) या ज्ञाता (Knower) नहीं। इसकी वास्तविक सत्ता (Real Existence) है और यह सतत् क्रियाशील (Ever active) है। पुनः, प्रकृति सामान्य (Universal) है, न कि विशेष (Particular)। इन विशेषताओं से युक्त होने के कारण प्रकृति को कई नामों से पुकारा गया है, जैसे– 'अव्यक्त' (Avyakta) अर्थात् विश्वरूपी कार्य की अव्यक्त अवस्था (Latent Stage), 'प्रधान' (Pradhan), अर्थात् विश्व का मूल कारण (First principle of universe), 'अजा', अर्थात् नित्य व शाश्वत (Eternal), 'अनुमान', अर्थात् अनुमानगम्य (Known through Inference) और 'प्रसवधर्मिणी', अर्थात् परिणामी (Transformative) या जगत् को जन्म देने वाली।

प्रकृति के तीन गुण (Three Gunas of Prakriti)

सांख्य-दर्शन प्रकृति की व्याख्या उसके तीन गुणों (Gunas) के माध्यम से करता है जो न केवल प्रकृति में,

Copyright– Drishti The Vision Foundation

योग दर्शन *(Yoga Philosophy)*

योग दर्शन सांख्य का सहयोगी दर्शन (Allied Philosophy) है। इसने सांख्य दर्शन की ही तत्त्वमीमांसा (Metaphysics) स्वीकार की है, किंतु उसमें ईश्वर (God) की धारणा को शामिल कर दिया है। इसलिये इसे 'सेश्वर सांख्य' (Seshvar Samkhya) या 'ईश्वरवादी सांख्य' (Theistic Samkhya) भी कहा जाता है। योग दर्शन का प्रमुख उद्देश्य सैद्धांतिक विवेचन न होकर कैवल्य (Liberation) प्राप्ति के मार्ग की स्थापना करना है। इसके अनुसार, कैवल्य (Liberation) का अर्थ है चित्तवृत्तियों के पूर्णतः निरुद्ध हो जाने (Cessation of the modifications of Chitta) पर पुरुष का स्वयं को प्रकृति के विकारों (Modes) से अलग कर लेना। इसकी विस्तृत व्याख्या करते हुए योग दार्शनिकों ने चित्त (Chitta), चित्तभूमि (Chittabhumi), चित्तवृत्ति (Chittavritti), क्लेश (Klesha) तथा अष्टांग मार्ग (Ashtanga Marga) का विवेचन किया है।

चित्त *(Chitta)*

योग दर्शन का उद्देश्य चित्तवृत्तियों के निरोध (Cessation of modifications of Chitta) के माध्यम से कैवल्य प्राप्ति (Attainment of Liberation) की प्रक्रिया बताना है। इस दृष्टि से चित्त का विवेचन योग दर्शन में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

चित्त का सामान्य अर्थ बुद्धि (Intellect) या महत् (Mahat) से है जो कि प्रकृति का प्रथम विकार (First mode) है। कुछ योग विचारकों, विशेषतः वाचस्पति मिश्र ने इसका अर्थ अंतःकरण (Antahkaran) माना है जिसमें बुद्धि (Intellect) के साथ-साथ अहंकार (Ego) और मन (Mind) भी शामिल हो जाते हैं।

योग दर्शन का चित्त (Chitta) मूलतः अचेतन (Unconscious) है क्योंकि वह अचेतन (Unconscious) प्रकृति का विकार (Mode) मात्र है। यह अत्यंत सूक्ष्म (Subtle) है क्योंकि प्रकृति का विकास सूक्ष्म से स्थूल की ओर (From subtle to gross) होता है और यह विकास का पहला ही चरण है। प्रकृति स्वभावतः त्रिगुणात्मक (Having three gunas) है। अतः चित्त भी इसके तीनों गुणों- सत्व, रजस्, तमस् से युक्त है। इसमें सत्त्व गुण की प्रधानता (Predominance of Sattva) है। सत्त्व गुण का परिणाम है कि चित्त पुरुष के प्रकाश से जगमग (Luminous) रहता है। चित्त संख्या में अनेक (Many) हैं क्योंकि प्रत्येक पुरुष के साथ चित्त का संबँध जोड़ा गया है।

योग दर्शन के अनुसार बँधन (Bondage) की व्याख्या चित्त के आधार पर ही होती है। पुरुष चित्त (Chitta) या बुद्धि (Intellect) में प्रकाशित अपने प्रतिबिंब (Reflection) से तादात्म्य (Identity) स्थापित कर लेता है और उसके सुख-दुःख व क्रियाओं को अपने सुख-दुःख आदि समझने लगता है। पुरुष व चित्त का यह प्रातीतिक संबँध (Apparent relation) ही बँधन (Bondage) का कारण है।

चित्त की चर्चा करते हुए योग दार्शनिकों ने पाँच चित्तभूमियों (Levels of mental life)- क्षिप्त (Kshipta or Restless), मूढ़ (Mudha or Torpid), विक्षिप्त (Vikshipta or Distracted), एकाग्र (Ekagra or Concentrated), निरुद्ध (Niruddha or Restricted); तथा पाँच चित्तवृत्तियों (Modifications of Chitta)- प्रमाण (Pramana or Right Cognition), विपर्यय (Viparyaya or Wrong Cognition), विकल्प (Vikalpa or Imagination), निद्रा (Nidra or Sleep) और स्मृति (Smriti or Memory) का विवेचन भी किया है।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

मीमांसा दर्शन *(Mimansa Philosophy)*

ज्ञान का सिद्धांत *(Theory of Knowledge)*

ज्ञान तथा प्रमाणों के भेद *(Classification of Knowledge and Pramanas)*

मीमांसा दर्शन के अनुसार ज्ञान (Knowledge) दो प्रकार के होते हैं- अपरोक्ष (Immediate) ज्ञान तथा परोक्ष (Mediate) ज्ञान। अपरोक्ष (Immediate) ज्ञान वह है जो किसी अन्य साधन पर निर्भर नहीं होता जबकि परोक्ष (Mediate) ज्ञान किसी अन्य साधन पर निर्भर होता है। ज्ञान के साधन को प्रमाण कहते हैं। अपरोक्ष ज्ञान को प्रत्यक्ष ज्ञान (Direct Knowledge) भी कहा जाता है और यहाँ 'प्रत्यक्ष' (Perception) ज्ञान तथा ज्ञान के साधन-दोनों रूपों में स्वीकृत है। परोक्ष ज्ञान के साधन अर्थात् प्रमाण पाँच हैं– अनुमान (Inference), शब्द (Testimony), उपमान (Comparison), अर्थापत्ति (Implication) तथा अनुपलब्धि (Non-Perception) । ध्यातव्य है कि इनमें से अंतिम प्रमाण अनुपलब्धि (Non-perception) को कुमारिल ने ही स्वीकार किया है, प्रभाकर ने नहीं।

प्रत्यक्ष *(Perception)*

भारत के सभी दर्शनों की तरह मीमांसा ने भी प्रत्यक्ष को प्रमाण माना है। प्रत्यक्ष की परिभाषा प्रभाकर के अनुसार 'साक्षात् प्रतीति' (Direct Apprehension) है जबकि कुमारिल के अनुसार-'कारणदोषरहित तथा अबाधित इंद्रियार्थसन्निकर्षजन्य ज्ञान प्रत्यक्ष है' (Perception is the knowledge through sense-object contact which is irrefuted and free from defects)। अन्य दर्शनों की तरह यहाँ भी बाह्य-प्रत्यक्ष (Extrinsic Perception) और अंतः प्रत्यक्ष (Intrinsic Perception) की धारणा स्वीकृत है जो कि पञ्चबाह्यज्ञानेंद्रियों (Five External Senses) तथा मन (Manas) से होते हैं।

मीमांसा के अनुसार प्रत्यक्ष की दो अवस्थाएँ हैं– निर्विकल्पक (Indeterminate) तथा सविकल्पक (Determinate)। निर्विकल्पक प्रत्यक्ष (Indeterminate Perception) में संबँधहीन प्रतीतिमात्र (Non-relational appearance) होती है अर्थात् 'कुछ है' (There is something) का ज्ञान होता है किंतु निश्चित निर्णय नहीं हो पाता। यही प्रतीति जब संबँधयुक्त होकर निश्चित निर्णय के रूप में स्पष्ट होती है तो सविकल्पक प्रत्यक्ष कहलाती है। ध्यातव्य है कि यह वर्गीकरण न्याय-वैशेषिक दर्शन ने भी किया है किंतु मीमांसा के दृष्टिकोण में एक भिन्नता है। न्याय के अनुसार निर्विकल्पक प्रत्यक्ष (Indeterminate Perception) सिर्फ एक सैद्धांतिक (Theoritical) अवस्था है तथा इसका भेद बुद्धिकृत (Mental) है जबकि मीमांसा के अनुसार निर्विकल्पक प्रत्यक्ष भी प्रवृत्तिसामर्थ्य (Capable of producing fruit) से युक्त होता है। उदाहरण के लिये-पशु, छोटे बच्चे, मंदबुद्धि वयस्क, मानसिक रोगी तो इस प्रत्यक्ष से प्रभावित होते ही हैं; सामान्य व्यक्तियों के जीवन में भी कुछ क्षण ऐसे आते हैं जब निर्विकल्पक प्रत्यक्ष के आधार पर वे कोई क्रिया संपादित (Performance of action) करते हैं।

मीमांसा के अनुसार सन्निकर्ष (Contact) के तीन भेद हैं– (i) संयोग (ii) संयुक्त तादात्म्य, तथा (iii) संयुक्त तादात्म्य तादात्म्य। ध्यातव्य है कि न्याय दर्शन ने सन्निकर्ष के छः भेद स्वीकार किये थे जिनमें से अंतिम

Copyright– Drishti The Vision Foundation

वेदांत संप्रदाय-शंकराचार्य *(Schools of Vedanta - Shankaracharya)*

शंकर का ब्रह्म विचार-अद्वैतवाद *(Shankar's Concept of Brahman-Advaitwada)*

शंकराचार्य के अद्वैतवाद (Non-dualism) में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संप्रत्यय (Concept) ब्रह्म का है। ब्रह्म शंकर की तत्त्वमीमांसा (Metaphysics) में एकमात्र सत्ता है जिसे पारमार्थिक (Transcendental) दृष्टि से सत् (Real) माना गया है। अद्वैतवाद (Non-dualism) का मुख्य उद्देश्य यही स्थापित करना है कि वास्तविक सत्ता (Real Existence) सिर्फ ब्रह्म की है। शंकर कहते भी हैं कि "ब्रह्म सत्यम्, जगत् मिथ्या, जीवो ब्रह्मैव नापरः" (Brahman is the only reality, the world is ultimately false; and the individual soul is non-different from Brahman)।

ब्रह्म एकमात्र सत् है (Brahman is the only reality)

शंकर के अनुसार सत् (Reality) का लक्षण है– त्रिकाल अबाधित (Irrefutable in all the times) होना जबकि असत् (Unreal) का लक्षण है– त्रिकाल बाधित (Refuted in all the times) होना। आकाश-कुसुम (Sky-flower) आदि काल्पनिक (Imaginary) पदार्थ असत् (Unreal) हैं जबकि ब्रह्म एकमात्र सत् है। जगत् के समस्त अनुभवों की व्याख्या करने के लिये शंकर ने सत्ता के तीन स्तरों को स्वीकार किया– प्रातिभासिक, व्यावहारिक तथा पारमार्थिक (Transcendental)। प्रातिभासिक (Illusory) स्तर वह है जिसे सामान्य भाषा में भ्रम (Illusion) कहते हैं, जैसे- रस्सी के स्थान पर साँप दिखना। यह व्यक्तिगत (Individual) तथा अल्पकालिक (Short-term) सत्य है जिसका निषेध (Negation) कुछ ही क्षणों में व्यावहारिक स्तर के अनुभव से हो जाता है। व्यावहारिक स्तर वह है जिसमें जगत् की वस्तुएँ सत् प्रतीत होती हैं, अर्थात् रस्सी का रस्सी दिखना। यह भी त्रिकाल अबाधित नहीं है क्योंकि सामूहिक (Collective) और दीर्घकालिक (Longlasting) अनुभव होने के बावजूद पारमार्थिक (Transcendental) स्तर के ज्ञान से इसका भी बाध (Refutation) हो जाता है। पारमार्थिक स्तर पर सिर्फ एक सत्ता है और वही ब्रह्म है। इस दृष्टि से त्रिकाल अबाधित होने के कारण ब्रह्म ही अद्वैतवाद में एकमात्र यथार्थ सत्ता (Only real existence) है।

ब्रह्म के दो रूप– निर्गुण व सगुण (Two forms of Brahman: Impersonal and Personal)

शंकराचार्य के अनुसार यद्यपि ब्रह्म एक ही है किंतु उसके दो रूप हैं– निर्गुण (Impersonal) व सगुण (Personal)। ब्रह्म मूलतः निर्गुण या निर्विशेष (Impersonal or Indeterminate) ही है अर्थात् वह गुणों से परे या गुणातीत (Beyond Attributes) है। गुणों (Attributes) के माध्यम से उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। इस अर्थ में वह स्पिनोज़ा के द्रव्य या ईश्वर के समान है और उपनिषदों में वर्णित परब्रह्म से तुल्य है। यही ब्रह्म जब माया की उपाधि से प्रभावित होता है तो ईश्वर या सगुण (Personal or Determinate) ब्रह्म बन जाता है। ईश्वर या सगुण ब्रह्म की सत्ता व्यावहारिक दृष्टि से ही है, पारमार्थिक दृष्टि से नहीं और यह उपनिषदों के अपर ब्रह्म के समान है।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

वेदांत संप्रदाय *(Schools of Vedanta)*

वेदांत संप्रदाय-रामानुजाचार्य *(Schools of Vedanta-Ramanujacharya)*

रामानुज का विशिष्टाद्वैतवाद *(Ramanuja's Vishishtadvaitwad)*

रामानुज का मत विशिष्टाद्वैतवाद (Qualified Non-Dualism) कहलाता है जो उपनिषदों की ही व्याख्या (Interpretation) होने के कारण वेदांत-दर्शन का एक रूप है। विशिष्टाद्वैतवाद (Qualified Non-Dualism) एक प्रकार का अद्वैतवाद (Non-Dualism) ही है किंतु यह शंकराचार्य के अद्वैतवाद (Non-Dualism) से भिन्न है क्योंकि इसमें जीव और जगत् की वास्तविक सत्ता (Real Existence) को भी स्वीकारा गया है। वस्तुत: रामानुज भागवत धर्म के ईश्वरवाद (Theism) से अत्यंत प्रभावित थे और उसी के अनुरूप ईश्वर को व्यक्तित्वपूर्ण (Personalistic), सगुण (Determinate) व उपास्य (Deity) रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे। दूसरी ओर उन पर उपनिषदों के ब्रह्मवाद (Brahmanism) का भी पर्याप्त प्रभाव था। विशिष्टाद्वैतवाद (Qualified Non-Dualism) औपनिषदिक ब्रह्मवाद तथा भागवत ईश्वरवाद के समन्वय (Synthesis) का प्रयास है।

शंकर के अद्वैतवाद का खंडन *(Refutation of Shankar's Non-Dualism)*

रामानुज शंकर के ब्रह्म (Brahman) या परम तत्त्व (Absolute Reality) की धारणा को उचित नहीं मानते। यह धारणा **धार्मिक दृष्टिकोण** (Religious point of view) से उचित नहीं है क्योंकि अनिर्वचनीय (Indescribable) और निर्गुण (Indeterminate) ब्रह्म उपासना (Prayer) आदि का विषय नहीं हो सकता। यह **ज्ञानमीमांसीय दृष्टि** (Epistemological point of view) से भी अनुचित है क्योंकि ज्ञान का कोई भी विषय सविकल्पक (Determinate) होता है, सिर्फ भेद (Different) या अभेद (Non-Different) नहीं हो सकता। अत: भेदयुक्त अभेद (Non-Difference with difference) ही ज्ञान की दृष्टि से उचित है। पुन: शंकर के ब्रह्म की धारणा **तत्त्वमीमांसीय दृष्टि** (Metaphysical point of view) से भी अनुचित है क्योंकि इसमें जगत् के वैविध्य (Diversity of world) की व्याख्या करने के स्थान पर जगत् को ही मिथ्या (Mithya) मान लिया गया है। अंतत: यह धारणा **नैतिक दृष्टि** (Moral point of view) से भी अनुचित है क्योंकि जगत् को मिथ्या मान लेने से नैतिक कर्म (Moral Deeds) आदि के लिये प्रोत्साहन (Motivation) भी नहीं बचता।

रामानुज का ब्रह्म विचार *(Ramanuja's Notion of Brahman)*

अपृथकसिद्धि (Aprthak Siddhi)

1. **स्वगत भेद (Internal Differences):** रामानुज के अनुसार भेदरहित अभेद (Non-Difference without Difference) और अभेदरहित भेद (Difference without Non-Difference) कोरी कल्पनाएँ हैं; वस्तुत: ब्रह्म भेदयुक्त अभेद (Non-Difference with Difference) या द्वैतविशिष्ट अद्वैत (Non-Dualism Qualified by Dualism) है। ब्रह्म में सजातीय भेद (Homogeneous Differences) नहीं हैं क्योंकि ब्रह्मतुल्य कोई दूसरी सत्ता नहीं है। ब्रह्म में विजातीय भेद (Heterogeneous Differences) भी नहीं हैं

Copyright– Drishti The Vision Foundation

भारतीय दर्शन में प्रामाण्यवाद एवं ख्यातिवाद
(Pramanyavada and Khyativada in Indian Philosophy)

भारतीय दर्शन में प्रामाण्यवाद
(Theory of Pramanyavada in Indian Philosophy)

प्रामाण्यवाद भारतीय दर्शन की ज्ञानमीमांसा से संबंधित एक गंभीर तथा महत्त्वपूर्ण विषय है। यह इस प्रश्न का उत्तर खोजने की कोशिश है कि किसी ज्ञान (प्रमा) में प्रामाण्य कहाँ से आता है? ज्ञान का प्रामाण्य ज्ञान के साथ स्वत: 'उत्पन्न' तथा 'ज्ञात' हो जाता है या ज्ञान प्राप्ति के बाद किसी भिन्न प्रक्रिया से (परत:) 'उत्पन्न' तथा 'ज्ञात' होता है– यही प्रामाण्यवाद की मूल समस्या है। इसके साथ ही इसमें यह प्रश्न भी अंतर्निहित है कि ज्ञान में अप्रामाण्य कहाँ से आता है– स्वत: या परत:।

विभिन्न भारतीय दर्शनों ने इस प्रश्न के भिन्न-भिन्न उत्तर दिये हैं। मीमांसा दर्शन की धारणा है कि ज्ञान में प्रामाण्य स्वत: आता है (स्वत: प्रामाण्यवाद), जबकि अप्रामाण्य परत: या बाद में (परत: अप्रामाण्यवाद) आता है। न्याय दर्शन के अनुसार ज्ञान का प्रामाण्य और अप्रामाण्य दोनों परत: प्राप्त होते हैं (परत: प्रामाण्यवाद तथा परत: अप्रामाण्यवाद)। सांख्य दर्शन में स्वत: प्रामाण्यवाद तथा स्वत: अप्रामाण्यवाद की धारणाएँ स्वीकृत हैं जबकि बौद्ध दर्शन प्रामाण्य को परत: और अप्रामाण्य को स्वत: स्वीकार करता है। इस संदर्भ में मुख्य विवाद मीमांसा के स्वत: प्रामाण्यवाद तथा न्याय के परत: प्रामाण्यवाद में है।

1. मीमांसा दर्शन का मत

मीमांसा दर्शन (और वेदांत) स्वत: प्रामाण्यवाद तथा परत: अप्रामाण्यवाद का समर्थक है। मीमांसकों के अनुसार ज्ञान और ज्ञान के प्रामाण्य की उत्पत्ति और प्राप्ति साथ-साथ होती है। जैसे ही हमें कोई ज्ञान प्राप्त होता है, उसके साथ ही स्वत: प्रामाण्य की उत्पत्ति (प्रामाण्यं स्वत: उत्पद्यते) तथा ज्ञान (प्रामाण्यं स्वत: ज्ञायते च) होता है। यह प्रामाण्य ज्ञान की उत्पादक सामग्री से ही आता है। जो दोषरहित कारण सामग्री ज्ञान को उत्पन्न करती है तथा बाधकता रहित होती है, वही ज्ञान का प्रामाण्य पैदा करती है। ज्ञान की प्राप्ति के साथ ही ज्ञान के प्रामाण्य का ज्ञान भी हो जाता है। जब हम कोई शेर देखते हैं तो तुरंत बचने का प्रयास करते हैं क्योंकि शेर के ज्ञान में ही ज्ञान का प्रामाण्य स्वत: प्राप्त हो जाता है।

जहाँ तक ज्ञान के अप्रामाण्य का प्रश्न है मीमांसक इसे 'परत:' स्वीकार करते हैं। किसी भी ज्ञान को सामान्यत: सत्य मानकर ही चला जाता है किंतु बाद में कोई बाधा उपस्थित होने पर यह अनुमान किया जाता है कि ज्ञान में अप्रामाण्य था। इस अनुमान के दो आधार होते हैं– 1. कारण सामग्री में दोष, और 2. अन्य बाधक ज्ञान। पीलिया का रोगी सफेद वस्तु को पीला इसलिये देखता है क्योंकि कारण सामग्री अर्थात् उसकी आँखों में पित्तदोष विद्यमान है। इसी प्रकार रस्सी में सर्प होने का ज्ञान बाद में रस्सी के रस्सी होने के ज्ञान से बाधित होता है। इस प्रकार अप्रामाण्य का आधार इनमें से कोई भी हो, वह होता परत: ही है।

आलोचना:

1. यदि ज्ञान स्वत: प्रमाणित होता है तो बाद में अप्रमाणित नहीं होना चाहिये क्योंकि एक ही ज्ञान में प्रामाण्य और अप्रामाण्य उपस्थित नहीं हो सकते।

Copyright– Drishti The Vision Foundation

महर्षि अरविंद *(Maharshi Arvind)*

महर्षि अरविंद नव्य वेदांत (Neo-Vedanta) से संबंधित दार्शनिक हैं जिन्होंने 1910 से 1950 ई. के बीच अपने दार्शनिक विचार प्रस्तुत किये। इनका दर्शन पूर्ण अद्वैतवाद (Integral Non-Dualism) के नाम से प्रसिद्ध है। अरविंद ने भारत के सभी दर्शनों का गहन अध्ययन किया था। इसके अतिरिक्त, इन्होंने पश्चिमी दर्शन में प्लेटो (Plato), अरस्तू (Aristotle), बर्गसाँ (Bergson) और व्हाइटहेड (Whitehead) का गहरा अध्ययन किया। इनके दर्शन पर इन चारों पश्चिमी दार्शनिकों के अतिरिक्त भारत के अद्वैत-वेदांत (Advait-Vedanta) तथा योग (Yoga) दर्शनों का प्रभाव स्पष्टत: दिखाई पड़ता है।

सृष्टि विचार *(Theory of Creation)*

अरविंद के दर्शन में सबसे ज़्यादा महत्त्व उनके सृष्टि विचार (Theory of Creation) का है। वेदांती (Vedantin) होने के कारण उनके सामने प्रमुख चुनौती सच्चिदानंद (Real, Conscious, Blissful) ब्रह्म और जगत् (World) के संबँध की व्याख्या करने की है। इस दृष्टि से वे शंकर के अद्वैतवाद (Non-Dualism) को स्वीकार नहीं करते जिसमें जगत् को ब्रह्म का विवर्त (Appearance of Brahman) तथा मिथ्या (Mithya) बताया गया है। वे नव्य वेदांत (Neo-Vedanta) के इस विचार से प्रभावित थे कि जगत् और ब्रह्म में तात्त्विक रूप से (Metaphysically) कोई भेद (Difference) नहीं है, जगत् ब्रह्म की ही लीलामय अभिव्यक्ति (Playful Expression) है। अरविंद के अनुसार परम सत् (Absolute Real) पूर्ण (Perfect) है किंतु आह्लाद (Delight) के कारण स्वयं को जगत् (World) के रूप में व्यक्त करता है। वे स्पष्ट कहते हैं कि परम सत् (Absolute Real) और जगत् (World) के स्वरूप में किसी प्रकार का तात्त्विक (Metaphysical) या कोटिगत (Categorical) अंतर नहीं है।

अरविंद के अनुसार जगत् की प्रक्रिया दो रूपों में व्यक्त होती है-अवरोहण (Involution) तथा आरोहण (Evolution)। पहले चरण में अवरोहण (Involution) की प्रक्रिया होती है जिसमें परम सत् (Absolute Real) स्वयं निम्नतर रूपों (Lower forms) में व्यक्त होता है। इसके पश्चात् आरोहण (Evolution) की प्रक्रिया होती है जिसमें जगत् के निम्नतर रूप (Lower Forms) परम सत् (Absolute Reality) की ओर बढ़ते हैं।

प्रतिविकास/अवरोहण *(Involution)*

अरविंद के अनुसार सृष्टि-प्रक्रिया के दो रूप हैं-अवरोहण (Involution) तथा आरोहण (Evolution)। इनमें से प्रथम है-अवरोहण (Involution), जिसका तात्पर्य है-परम सत् (Absolute Reality) का स्वयं को जगत् के निम्नतर रूपों (Lower forms) में व्यक्त करना। अरविंद के ही शब्दों में कहें तो अवरोहण (Involution) की प्रक्रिया में 'परम सत् अज्ञान में प्रविष्ट होता है' (Plunge of the Absolute Real into Ignorance)। ध्यातव्य है कि यहाँ अज्ञान का अर्थ 'ज्ञान का विरोधी' (Contrary to knowledge) नहीं बल्कि 'आंशिक ज्ञान' (Partial knowledge) है। अवरोहण (Involution) का ही परिणाम है जगत् की अभिव्यक्ति। अत: जगत् का अर्थ है 'परम सत् की आंशिक अभिव्यक्ति का क्षेत्र' (Area of partial expression of Absolute Real)।

अरविंद ने अवरोहण सिद्धांत (Theory of Involution) एक विशेष उद्देश्य से दिया है। जो दार्शनिक परम सत् (Absolute Real) को पारमार्थिक (Transcendental) मानते हैं, उनके समक्ष यह समस्या हमेशा रहती है कि सीमित (Finite) और परिवर्तनशील (Changeable) जगत् का संबँध परम सत् (Absolute

Copyright– Drishti The Vision Foundation